

<?xml version="1.0" ?>			
<?xml-stylesheet type="text/css" href="home.css"?>			
<Doc id="hin-w-media-	H0338(b)	"	lang="hindi">
<Header type="text">			
<encodingDesc>			
<projectDesc>	CIIL-KHS Hindi Corpora, Monolingual Written Text		</projectDesc>
<samplingDesc>	Simple written text only has been transcribed. Diagrams, pictures and tables have been omitted. Samples taken from page 29,30		</samplingDesc>
</encodingDesc>			
<sourceDesc>			
<biblStruct>			
<source>			
	<category>	Aesthetics	</category>
	<subcategory>	Literature-Short stories	</subcategory>
	<text>	Book	</text>
	<title>	Charchit Kahaniyan	</title>
	<vol>		</vol>
	<issue>		</issue>
</source>			
<textDes>			
	<type>		</type>
	<headline>	Muhhalle Ka Ravan	</headline>
	<author>	Ramesh Chandra Shah	</author>
	<words>	524	</words>
</textDes>			
<imprint>			
	<pubPlace>	India-New Delhi	</pubPlace>
	<publisher>	Jagdish Bhardwaj Prakashan	</publisher>
	<pubDate>	1994	</pubDate>
</imprint>			
<idno type="CIIL code">	74110		</idno>
<index>	H0338(b)		</index>
</biblStruct>			
</sourceDesc>			
<profileDesc>			
<creation>			
	<date>	13-Jul-2005	</date>
	<inputter>	Rajeshwari.R	</inputter>
	<proof>		</proof>
</creation>			
<langUsage>	Hindi		</langUsage>
<wsdUsage>			
<writingSystem id="ISO/IEC 10646">Universal Multiple-Octet Coded Character Set (UCS).			
</writingSystem>			
</wsdUsage>			
<textClass>			
<channel mode="w">	print		</channel>
<domain type="public">			</domain>
</textClass>			
</profileDesc>			
</Header>			

<text><body>		
<p>	पर कादिर मियाँ को प्यारी हो चुकी थी और सूफिया ही कादिर मियाँ के लँगोटिया यार लालू सेठ का कहना था-और मेरी राय भी यही थी-कि चिचंडे बहुत चटोर हैं और जो कुछ कमाते हैं सब पेट के गड्ढे में डाल देते हैं। पक्षे आए नहीं कि फूँके। मिठाई के बगल उनसे रहा नहीं जाता था। खड़े-खड़े आधा सेर रबड़ी चाट जाते थे। कड़की के दिनों में भी-उधारी जिन्दाबाद-उनका वही ढंग रहता था। शराब वे पीते थे या नहीं मैं कह नहीं सकता, पर पक्षे उन्होंने किसी के मारे हों, ऐसा कभी नहीं सुना गया।	</p>
<p>	मुहर्रम के दिनों में कादिर मियाँ टोपियाँ सिलना बंद कर देते थे और मिठाई का खोमचा लगाते थे। जन्माष्टमी के दिनों में जो पंजीरी का प्रसाद बनता था वह मुझे बेहद पसंद था और यह मुहर्रम वाली मिठाई भी मुझे वषा ही स्वाद देती थी- बल्कि कादिर मियाँ के हाथ की बनी वह ज्यादा ही स्वादिष्ट होती थी। पंजीरी के मेवे का तो सवाल ही नहीं और कादिर मियाँ अपनी उस खास मिठाई के अंदर ऐसे मेवे डालते थे कि दूसरे खोमचे वाले उनका सपना भी नहीं देख सकते थे। इस खोमचे से उनकी क्या आमदनी होती होगी यह तो वही जानें पर जिस तरह खोमचे लगते ही हम बच्चे उन पर टूट पड़ते थे और आधा घंटे के अंदर सब साफ कर देते थे और एक हाथ की मुट्ठी में हमारे अधन्ने बटोर के जेब में डालते हुए कादिर मियाँ जिस उल्लास के साथ 'खेल खतम पक्षा हजम' कहते हुए खोमते समेटते थे उसे देखते हुए हमें यही लगता था कि वे मदारी हैं। पूरे बाजार में सबसे बढ़िया ताजिया हमारे मुहल्ले में बनता था और दशहरे के दिन जो नौ रावणों के रथों का जुलूस निकलता था उसमें भी हर साल पहला नंबर हमारे मुहल्ले के रावण का ही होता था। कई रातों की मेहनत इसके पीछे हुआ करती थी और आखिरी रात को कादिर मियाँ हम लोगों को जरा जल्दी ही खिसका देते थे। हम सबका यही ख्याल था कि हमारे रावण के पहले नंबर का राज उस आखिरी रात की आखिरी कारगुजारी में ही निहित था। पूरा हनुमाना कादिर मियाँ के इस हुनर का कायल था और खुद कादिर मियाँ को भी इसका पूरा अहसास था।	</p>
<p>	मामूली कहासुनी तो फटफटुवा और कादिर मियाँ के पहले भी होती रही होगी। कौन यकीन करेगा कि जो आदमी अपनी बदमिजाजी के लिए मुहल्ले-भर में बदनाम हो और आधे से ज्यादा लोगों को फूटू आँखों भी न सुहाता हो, ऐसे आदमी के साथ कादिर मियाँ जस्र चुहलबाज और नेकनीयत आदमी की एक-तिहाई सदी के दौरान कभी खटकी ही न होगी। पर उस दिन जो कुछ हुआ, वह कल्पनातीत था।	</p>
<p>	मुहल्ले के फटफटुवा की गिरी हुई साख का इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है कि सबसे बड़ी दूकान होते हुए भी सिवाय एक कादिर मियाँ के कोई उसके यहाँ फटकता तक नहीं था। बदमिजाजी के अलावा उसके हिसाब की गड़बड़ियाँ भी आम चर्चा का विषय थीं। इसके बावजूद उसके यहाँ ग्राहकों भीड़ लगी रहती थी। ये ग्राहक कुछ तो दूसरे मुहल्लों के लोग होते थे पर ज्यादातर आसपस और दूरदराज के गाँवों के; जिन्हें लाला फटफटुवा की विशेषताओं के बारे में कोई खास इल्म नहीं हो सकता था।	</p>

</body></text>

</Doc>